Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 4, March-2019, ISSN 2230-7540

पर्यावरण क्षरण का ग्रामीण समाज में निर्धनता पर प्रभाव-बिहार के परिप्रेक्ष्य में

Dr. Binu Pathak*

HOD Sociology, Purnea University, Purnia

सार – ***आज भारत की चुनौतियों में निधर्नता, ग्रामीण भारत का विकास तथा आधारिक संरचना का निर्माण प्रमुख है। हम सौ करोड़ लोगों की शक्ति से संपन्न राष्ट्र हैं तथा मानव पूँजी हमारी एक बड़ी संपत्ति है। इसमें शिक्षा तथा स्वास्थ्य में निवेश आवश्यक है। हमें रोजगार के स्वरूप को समझने की एवं देश में और अधिक रोजगार के अवसर के सृजन की जरूरत है। हम विकास के निहितार्थों को भी अपने पर्यावरण तथा धारणीय विकास की मांग के संदर्भ में देखेंगे। इन मुद्दों को सुलझाने के क्रम में सरकार की नीतियों का आलोचनात्मक आकलन किए जाने की जरूरत है, जिस पर इस इकाई में अलग से चर्चा की गई है।***

----------X----------

प्रस्तावना

पर्यावरण क्षरण से तात्पर्य पर्यावरण की उस अवस्था से है जब इसके भौतिक घटकों में निरंतर क्षय होने लगता है। क्षरण की इस प्रक्रिया में जैविक प्रक्रियाओं, खासकर मानवीय गतिविधियों की बहुत बड़ी भूमिका होती है। यही नहीं पर्यावरण क्षरण इस हद तक हो जाता है कि स्व-नियंत्रण कार्यवधि या आंतरिक प्रक्रिया भी इस पर रोक नहीं लगा पाती। दरअसल मानवीय क्रियाओं व गतिविधियों के कारण पर्यावरण के तत्वों व घटकों में व्यापक रूप से फेर-बदल हो जाता है जिसके कारण पर्यावरण की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। पर्यावरण की संरचना में आया यह नकारात्मक परिवर्तन अंततः पृथ्वी पर मौजूद हर जैविक समुदाय खासकर मानव समाज पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

निर्धनता के स्थान-स्थान पर तथा समय पर अलग-अलग स्वरूप हैं। इनकी अनेक प्रकार से व्याख्या की गई है। मोटे तौर पर निर्धनता ऐसी दशा मानी जाती है, जिससे सभी व्यक्ति बचना चाहते हैं। अतः निर्धनता, निर्धन तथा धनी दोनों के लिए विश्व को बदलने का एक आह्नान है ताकि अधिक से अधिक लोगों को पेटभर भोजन नसीब हो सके सिर छुपाने को बेहतर जगह मिल सके, चिकित्सा व शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त हो सके, हिंसा से उनका बचाव हो सके तथा अपने समाज के घटनाक्रम में उनकी आवाज की भी सुनवाई हो सके यह जानने के लिए कि निर्धनता कम करने में कौन-सी नीतियाँ सफल हो सकती हैं और कौन सी नहीं, समयानुसार किन बातों में बदलाव आ सकते हैं, हमें निर्धनता को परिभाषित करना तथा इसका मापन, अध्ययन और अनुभव भी करना होगा। निर्धनता के अनेक आयाम होते हैं, अतः अनेक सूचकों के माध्यम से उनका अवलोकन करना होगा। कहीं आय और उपभोग के स्तर, कहीं सामाजिक सूचकों और जोखिम के प्रति संवेदनशीलता के सूचकों, तो कहीं सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रियाओं तक पहुँच या उनमें भागीदारी पर विचार करना होगा।

भारत में निर्धनता रेखा का निर्धारण करते समय जीवन निर्वाह के लिए खाद्य आवश्यकता, कपड़ों, जूतों, ईंधन और प्रकाश, शैक्षिक एवं चिकित्सा संबंधी आवश्यकताओं आदि पर विचार किया जाता है। इन भौतिक मात्राओं को रुपयों में उनकी कीमतों से गुणा कर दिया जाता है। निर्धनता रेखा का आकलन करते समय खाद्य आवश्यकता के लिए वर्तमान सूत्र वांछित कैलोरी आवश्यकताओं पर आधारित है। खाद्य वस्तुएँ जैसे अनाज, दालें, सब्जियाँ, दूध, तेल, चीनी आदि मिलकर इस आवश्यक कैलोरी की पूर्ति करती हैं। आयु लिंग, काम करने की प्रकृति आदि के आधार पर कैलोरी की आवश्यकताएँ बदलती रहती हैं। भारत में स्वीकृत कैलोरी आवश्यकता ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन एवं नगरीय क्षेत्रों में 2100 कैलोरी प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन है। चूँकि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोग अधिक शारीरिक कार्य करते हैं, अतः ग्रामीण क्षेत्रों में कैलोरी

www.ignited.in

आवश्यकता शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक मानी गई है। अनाज आदि के रूप में इन कैलोरी आवश्यकताओं को खरीदने के लिए प्रतिव्यक्ति मौद्रिक व्यय को, कीमतों को ध्यान में रखते हुए, समय पर संशोधित किया जाता है। इन परिकल्पनाओं के आधार पर वर्ष 2011-12 में किसी व्यक्ति के लिए निर्धनता रेखा का निर्धारण ग्रामीण क्षेत्रों में 816 रुपये प्रतिमाह और शहरी क्षेत्रों में 1000 रुपये प्रतिमाह किया गया

कम कैलोरी की आवश्यकता के बावजूद शहरी क्षेत्रों के लिए उच्च राशि निश्चित की गई, क्योंकि शहरी क्षेत्रों में अनेक आवश्यक वस्तुओं की कीमतें अधिक होती हैं। इस प्रकार, वर्ष 2011-12 में ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाला पाँच सदस्यों का परिवार निर्धनता रेखा के नीचे होगा, यदि उसकी आय लगभग 4080 रुपये प्रतिमाह से कम है। इसी तरह के परिवार को शहरी क्षेत्रों में अपनी मूल आवश्यकताएँ पूरा करने के लिए कम से कम 5, 000 रुपये प्रतिमाह की आवश्यकता होगी। निर्धनता रेखा का आकलन समय-समय पर सामान्यतः हर पाँच वर्ष पर सर्वेक्षण के माध्यम से किया जाता है।

पिछले दो-ढाई दशक में जिस रफ्तार से भारत में विकास हुआ है, उसकी तुलना में गरीबी और असमानता उस रफ्तार में कम नहीं हुई है। आँकड़ों में गरीबी कुछ कम जरूर हुई है, लेकिन आर्थिक असमानता की खाई और चैड़ी हुई है। आज भी देश में 30 करोड़ लोग गरीबी रेखा से नीचे निर्वाह करने को विवश हैं और उनके लिये प्रथम वरीयता रोटी, कपड़ा और मकान है।

पर्यावरण के बारे में ज्यादा वे कुछ नहीं जानते है और जितना जानते भी हैं, उसके तहत यह मुद्दा उनकी वरीयता में सबसे नीचे है। पर्यावरण पर यह आर्थिक असमानता भारी पड़ रही है और इसके कई प्रकार के दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं।

आर्थिक असमानता केवल भारत में ही देखने को नहीं मिलती, बल्कि यह एक विश्वव्यापी समस्या है। इसे स्पष्ट करने के लिये केवल यह एक तथ्य पर्याप्त है कि विश्व के कुल धन का आधे से अधिक केवल 42 लोगों के हाथों में सिमटा हुआ है।

गरीबी में राज्य स्तर के रुझान चार्ट में दिखाए गए हैं। चार्ट में दो पंक्तियाँ राष्ट्रीय गरीबी के स्तर का संकेत करती हैं। नीचे से पहली पंक्ति 2011-12 के दौरान गरीबी के स्तर का संकेत है और दूसरी पंक्ति वर्ष 1973-74। इसका मतलब है कि 1973-2012 के दौरान भारत में गरीबों का अनुपात 55 से 22 आ गया है, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल और ओडिशा- 1973-74 में गरीबों का एक बड़ा वर्ग छह राज्यों में है। 1973-2012 के दौरान, कई भारतीय राज्यों ने काफी हद तक गरीबी के स्तर को कम कर दिया। फिर भी, चार राज्यों में गरीबी का स्तर ओडिशा, मध्य प्रदेश, बिहार और उत्तर प्रदेश में अभी भी राष्ट्रीय गरीबी के स्तर से ऊपर है। पश्चिम बंगाल और तमिलनाडु ने अन्य राज्यों की तुलना में काफी बेहतर तरीकों से गरीबी के स्तर को कम किया है। वैसे वे अन्य राज्यों की तुलना में काफी बेहतर करने के लिए सक्षम हुए हैं?

चित्र स्वरोजगार की गुणवत्ता का निम्न स्तर निर्धनता का पोषक

उद्देश्य

1. निर्धनता के स्थान पर तथा समय पर अलग-अलग स्वरूप हैं।

2. निर्धनता रेखा के नीचे जीवन यापन के विकास की अवधारणा का अध्ययन करना।

गरीबी से सीधे जुड़ा है पर्यावरण

गरीबी और पर्यावरण प्रदूषण सीधे-सीधे आपस में जुड़े हुए हैं, विशेषकर वहाँ, जहाँ लोग अपनी रोजी-रोटी के लिये अपने निकट के प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहते हैं।

- पर्यावरण संरक्षण के लिये गरीबी कम होना पहली और अनिवार्य शर्त है।

- जलवायु अनुकूल तकनीक इसीलिये आवश्यक मानी जाती है क्योंकि इससे समाज के कमजोर वर्गों की सहायता करने में आसानी रहती है।

- जैव विविधता पर लगातार बढ़ता दबाव मानव की बढ़ती जनसंख्या को भी परिलक्षित करता है। जब तक जनसंख्या स्थिर नहीं हो जाती, तब तक यह दबाव कम नहीं होने वाला और यह भी उतना ही

सत्य है कि गरीब परिवारों में सदस्यों की संख्या अधिक होती हैं।

इसे इन दो उदाहरणों से स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं

1. गरीबी पर्यावरण की कुछ ऐसी समस्याओं को जन्म देती है, जिनसे यह और बढ़ती है। उदाहरणार्थ, गरीब किसानों द्वारा कमजोर जमीन पर खेती करने से उसका क्षरण और बढ़ जाता है और अंततः इससे किसान की ही निर्धनता बढ़ती है।

2. गरीबों के द्वारा वनों से लकड़ी काटकर बेचना। इससे वन तो नष्ट हो ही रहे हैं, लकड़ी की कमी हो रही है। इसका अंतिम परिणाम भी गरीबों की गरीबी और बढ़ने के रूप में सामने आता है।

पर्यावरणीय अवक्रमण से बढ़ती है गरीबी

- देश के समक्ष जो प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियाँ हैं, वे पर्यावरणीय अवक्रमण तथा विभिन्न आयामों में मौजूद गरीबी तथा आर्थिक असमानता तथा प्रगति के गठजोड़ से संबंधित हैं।

- ये चुनौतियाँ आंतरिक तौर पर भूमि, जल, वायु जैसे पर्यावरणीय से जुड़ी हुई हैं। पर्यावरण अवक्रमण के आसन्न कारकों में जनसंख्या वृद्धि, अनुपयुक्त प्रौद्योगिकी एवं उपभोग संबंधी विकल्प का चयन तथा गरीबी के साथ-साथ विकास गतिविधियों जैसे गहन-कृषि, प्रदूषक उद्योग तथा अनियोजित शहरीकरण आदि शामिल हैं।

- ये कारक केवल गंभीर कारण संबंधों के माध्यम से पर्यावरणीय अवक्रमण, विशेषकर संस्थागत विफलताओं को जन्म देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरणीय स्रोतों की प्राप्ति और उनके प्रयोग संबंधी अधिकारों के प्रवर्तन संबंधी पारदर्शिता में कमी आने के साथ-साथ पर्यावरणीय संरक्षण को हतोत्साहित करने वाली नीतियाँ, बाजार असफलता तथा संचालन संबंधी बाधाएँ उत्पन्न हो सकती हैं।

- पर्यावरणीय अवक्रमण विशेषकर निर्धन ग्रामीणों में गरीबी को बढ़ावा देने वाला एक प्रमुख कारक है। इस प्रकार का अवक्रमण मृदा की उपजाऊ शक्ति, स्वच्छ जल की मात्रा और गुणवत्ता, वायु गुणवत्ता, वनों, वन्य-जीवन तथा मत्स्य-पालन को प्रभावित करता है।

निर्धनता निवारण के लिए नीतियाँ और कार्यक्रम

भारतीय संविधान और पंचवर्षीय योजनाओं ने सामाजिक न्याय को सरकार की विकास रण-नीतियों का प्राथमिक उद्देश्य माना है। पहली पंचवर्षीय योजना (1951.56 के अनुसार वर्तमान परिस्थितियों में आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन की अंतः प्रेरणा का उदय तो निर्धनता और आय, संपत्ति तथा अवसरों की असमानताओं से होता है। दूसरी योजना 1956-61 में भी कहा गया है, "आर्थिक विकास के अधिकाधिक लाभ समाज के अपेक्षाकृत कम भाग्यशाली वर्गों तक पहुँचने चाहिए"। प्रायः सभी नीति विषयक दस्तावेजों में निर्धनता निवारण और इस दिशा में सरकार द्वारा अपनाई जाने वाली रण-नीतियों की चर्चा हुई है।

चित्र काम बदले अनाज' कार्यक्रम अंतर्गत रोजगार

सरकार ने निर्धनता निवारण के लिए त्रि-आयामी नीति अपनाई। पहली संवृद्धि आधारित रण-नीति है। यह इस आशा पर आधारित है कि आर्थिक संवृद्धि के अर्थात् सकल घरेलू उत्पाद और प्रतिव्यक्ति आय में तीव्र वृद्धि के प्रभाव समाज के सभी वर्गो तक पहुँच जाएँगे ये समाज के निर्धनतम वर्गों तक भी धीरे-धीरे पहुँच पायेंगे। 1950 से 1960 के दशक के पूर्व में हमारी योजनाओं का मुख्य उद्देश्य यही था। यह माना जा रहा था कि तीव्र दर से औद्योगिक विकास और चुने हुए क्षेत्रों में हरित क्रांति के माध्यम से कृषि का पूर्ण काया-कल्प निश्चय ही समाज के अधिक पिछडे वर्गों को लाभान्वित करेगा।

www.ignited.in

गरीबी है सबसे बड़ा प्रदूषण

1970 के दशक की शुरुआत में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने स्टॉकहोम में हुए प्रथम विश्व पर्यावरण सम्मेलन में कहा था, गरीबी स्वयं सबसे बड़ा प्रदूषण है।

भारत के संदर्भ में कहा जाता है कि वह प्राकृतिक संसाधनों से धनी, लेकिन गरीबों का देश है। भारत जैसे विशाल आबादी वाले देश में पर्यावरण पर न जाने कितनी तरह से लोगों और समूहों का अस्तित्व टिका है। जब भी पर्यावरण के किसी भी हिस्से को क्षति होती है तो समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को अपूरणीय क्षति होती है। भारत में पर्यावरण संरक्षण को लेकर होने वाले आंदोलन भारी असमानता और गरीबी के बीच आगे बढ़े हैं। तुलनात्मक रूप से गरीब देशों के इस पर्यावरणवाद में बदलाव तब तक अप्रभावी व असंभव होता है, जब तक कि उससे जुड़े प्रमुख मुद्दे हल नहीं हो जाते। आय असमानता किसी भी कल्याणकारी राज्य की सबसे बड़ी विडंबना है।

हमारा समाज कृषि प्रधान समाज है ग्रामीण परिवेश के किसान कृषि के लिए प्रकृति पर आश्रित रहते है परन्तु पर्यावरणीय क्षरण के कारणः-

1. अति -वृष्टि
2. सूखा
3. बाढ़
4. भूस्खलन होते रहते है,

जिसके कारण पैदावार उचित मात्रा में नहीं हो पाती है! परिणाम स्वरुप निर्धनता की स्थिति बनी रहती है !

जनसंख्या वृद्धि

देश में सबसे अधिक तेजी से जनसंख्या वृद्धि बिहार में हो रही है। साल 2001 से 2011 के बीच देश की जनसंख्या वृद्धि दर 17.64 फीसदी की थी, तो बिहार में यह 25.07 फीसदी रही। जनसंख्या वृद्धि दर का ही नतीजा रहा कि 2011 में बिहार की जनसंख्या 10 करोड़ 38 लाख हो गई। जनसंख्या के लिहाज से हरेक जिले की आबादी का औसत 27 लाख से अधिक है

ग्रामीण विकास की प्रक्रिया

बिहार स्वाबलंबी सहकारी समिति अधिनियम, १९९६ (अधिनियम संख्या-२, १९९७) ग्रामीण विकास का सम्बन्ध देश कि ७० प्रतिशत जनसंख्या से है, जबकि शहरी विकास का सम्बन्ध देश की ३० प्रतिशत जहाँ सहकारिता अपने सभी उद्देश्यों को ग्रामीण विकास प्रक्रिया में सहज ही प्राप्त कर सकती है।

भूमिगत जल का अत्यधिक उपयोग

बिहार के कई जिलों में भूमिगत जल स्तर की स्थिति पिछले 30 सालों में चिंताजनक हो गई है। कुछ जिलों में भूजल स्तर दो से तीन मीटर तक गिर गया है। एक ताजा अध्ययन के अनुसार, भूजल में इस गिरावट का मुख्य कारण झाड़ीदार वनस्पति क्षेत्रों एवं जल निकाय क्षेत्रों का तेजी से सिमटना है। आबादी में बढ़ोत्तरी और कृषि क्षेत्र में विस्तार के कारण भी भूजल की मांग बढ़ी है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) और काठमांडू स्थित इंटरनेशनल सेंटर फॉर इंटिग्रेटेड माउंटेन डेवेलपमेंट के शोधकर्ताओं द्वारा उत्तरी बिहार के 16 जिलों में किए गए इस अध्ययन के अनुसार, जल निकाय सिमटने के कारण प्राकृतिक रूप से होने वाला भूमिगत जल रिचार्ज भी कम हुआ है। शोधकर्ताओं के अनुसार, जिलों के भूमिगत जल स्तर में 2-3 मीटर की गिरावट दर्ज की गई है। भूजल में गिरावट से प्रभावित हुए। इन जिलों के भूजल भंडार में तीस वर्षों के दौरान क्रमशः 57.7 करोड़ घन मीटर, 39.5 करोड़ घन मीटर और 38.5 करोड़ घन मीटर गिरावट दर्ज की गई है।

मानसून से पहले और उसके बाद के महीनों में भूजल भंडार के मामले में इसी तरह का चलन समस्तीपुर, कटिहार और पूर्णिया जिलों में देखने को मिला है। मानसून से पूर्व भूजल भंडार में सबसे अधिक गिरावट 63.6 करोड़ घन मीटर और 63.1 करोड़ घन मीटर दर्ज की गई है। वहीं, मानसून के बाद भूजल भंडार में सबसे अधिक गिरावट 28.9 करोड़ घन मीटर और 21.6 करोड़ घन मीटर दर्ज की गई है।

इस अध्ययन में भूजल भंडार, भूमि उपयोग एवं भू-आवरण संबंधी तीस वर्षों के आंकड़े (1983-2013) उपयोग किए गए हैं। भूजल संबंधी आंकड़े केंद्रीय भूमि जल बोर्ड और राज्य भूमि जल बोर्ड से लिए गए हैं। वहीं, भूमि उपयोग और भू-आवरण संबंधी आंकड़े हैदराबाद स्थित नेशनल रिमोट सेंसिंग सेंटर से प्राप्त किए गए हैं।

शोधकर्ताओं ने पाया कि इस दौरान एक ओर कृषि क्षेत्र के दायरे में 928 वर्ग किलोमीटर की बढ़ोत्तरी हुई है तो दूसरी ओर जल निकायों का क्षेत्र 2029 वर्ग किलोमीटर से सिमटकर 1539 वर्ग किलोमीटर रह गया है। इसी के साथ

www.ignited.in

झाड़ीदार वनस्पतियों के क्षेत्रफल में भी इस दौरान 435 वर्ग किलोमीटर की गिरावट दर्ज की गई है।

आईआईटी, कानपुर के पृथ्वी विज्ञान विभाग से जुड़े प्रमुख शोधकर्ता डॉ. राजीव सिन्हा ने इंडिया साइंस वायर को बताया कि "यह अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि उत्तरी बिहार को दूसरी हरित क्रांति के संभावित क्षेत्र के रूप में देखा जा रहा है। इस तरह की कोई भी पहल करते वक्त भूजल के टिकाऊ प्रबंधन से जुड़ी योजनाओं को ध्यान में रखना होगा ताकि भविष्य में गंभीर जल संकट से बचा जा सके।"

डॉ. सिन्हा के मुताबिक, "हरित क्रांति के कारण पंजाब जैसे राज्यों में भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन को बढ़ावा मिला है और यह क्षेत्र अब दुनिया के सर्वाधिक भूजल दोहन वाले इलाकों में शुमार किया जाता है। कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए अत्यधिक जोर देने और भूजल प्रबंधन के लिए चिंता नहीं होने के कारण वहां ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई है। बिहार के उत्तरी क्षेत्र में भूजल तेजी से गिर रहा है और भविष्य में बदलती सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के साथ जल के दोहन को बढ़ावा मिलने की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता है।"

बिहार के उत्तरी इलाकों से होकर हिमालय की कई नदियां निकलती हैं और हर साल लगभग 1200 मिलीमीटर वर्षा इस क्षेत्र में होती है। यह क्षेत्र सतह पर मौजूद जल और भूमिगत जल संपदा के मामले में काफी समृद्ध माने जाते है। इसके बावजूद बिहार के इस मैदानी क्षेत्र में 80 प्रतिशत सिंचाई भूमिगत जल से ही होती है, जिसके कारण भविष्य में यहां गंभीर जल संकट खड़ा हो सकता है। अध्ययनकर्ताओं के अनुसार, "भविष्य में जल संकट से बचने के लिए टिकाऊ भूजल प्रबंधन योजनाओं को तत्काल विकसित किया जाना जरूरी है। इस कछारी क्षेत्र में जलाभृतों की सटीक मैपिंग, भूजल संबंधी आंकड़ों का एकीकरण, कृषि एवं भूमि उपयोग प्रक्रिया में सुधार और भूमिगत जल के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए प्रभावी नियमन महत्वपूर्ण हो सकता है।" यह अध्ययन शोध पत्रिका करंट साइंस में प्रकाशित किया गया है। अध्ययनकर्ताओं में डॉ सिन्हा के अलावा सूर्या गुप्ता और संतोष नेपाल शामिल थे।

उपसंहार

पिछले 3-4 दशकों के अनुभव से तो यही पता चलता है कि पर्यावरण संवर्द्धन के बिना संतुलित आर्थिक विकास नहीं हो सकता। पर्यावरण का अर्थ केवल जमीन, हवा या पानी मात्र नहीं हैं, बल्कि पर्यावरण में वे समस्त प्राकृतिक संसाधन शामिल हैं, जिन पर मानव जीवन का अस्तित्व निर्भर करता है। किसी भी प्रकार से पर्यावरण पर पड़ने वाला दुष्प्रभाव आर्थिक असमानता की खाई को और चैड़ा बना देता है और इसकी सीधी चोट सबसे ज्यादा गरीबों पर पड़ती है। कह सकते हैं कि बिगड़ता पर्यावरण और सामाजिक अन्याय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। वास्तव में हम आर्थिक और सामाजिक विकास का कैसा रूप चुनते हैं, यह इसी पर निर्भर करेगा कि हमने विकास हेतु पर्यावरण का दोहन किस रूप में किया है? जैसे कि समुद्र के तटवर्ती हिस्सों के पर्यावरणीय दोहन से न केवल लाखों मछुआरों की आर्थिक स्थिति प्रभावित हुई है, बल्कि उनकी सामाजिक-संस्कृति भी क्षरित हुई है। ऐसे में हमें यह समझना होगा कि पर्यावरण और मानव अस्तित्व एक-दूसरे के पूरक हैं, लेकिन पर्यावरण के बिना मानव जीवन की कल्पना करना बेमानी है। सतत विकास की अवधारणा मनुष्य और उसके पर्यावरण के अंतर्संबंध स्पष्ट करते हुए चेतावनी देती है कि मनुष्य पर्यावरण की कीमत पर विकास नहीं कर सकता क्योंकि इसमें अंततः पराजय मनुष्य की ही होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. नवीन वुफमार एंड एस. सी. अग्रवाल 2003

2. पैटर्न ऑफ़ फेडरेशन एंड पावर्टी इन दिल्ली स्लम्स, इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, दिसंबर 13.

3. बी. एस. मिनहाल, एल. आर. जैन एंड एड. डी. तेंदुलकर (1991), डिक्लाइनिंग इंसिडेंस ऑफ़ पावर्टी इन दी 1980,

4. एविडेंस बर्सस आइ्री फैक्ट्स, इकॉनामिक एंड पोलिटिकल वीकली, जुलाई

5. चैहान, संदीप सिंह, भारत में दलित चेतना गांधी और अम्बेडकर

6. आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृ0सं0 192 शर्मा,

7. डॉ. देवकांता, कैटिल्य के प्रशासनिक विचार, प्रिण्टवेल, जयपुर

8. स्टेनले, एल.पी., मिडाइवल इण्डिया, कोलकाता

www.ignited.in

Corresponding Author

Dr. Binu Pathak*

HOD Sociology, Purnea University, Purnia

www.ignited.in